दर्शन-पाठ

दर्शनं देवदेवस्य, दर्शनं पापनाशनम्।
दर्शनं स्वर्गसोपानं, दर्शनं मोक्षसाधनम्॥ १॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम्॥ २॥
वीतराग-मुखं दृष्ट्वा, पद्मराग-समप्रभम्।
जन्म-जन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति॥ ३॥
दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनम्।
बोधनं चित्त-पद्मस्य, समस्तार्थ-प्रकाशनम्॥ ४॥
दर्शनं जिन-चन्द्रस्य, सद्धर्मामृत-वर्षणम्।
जन्म-दाहविनाशाय, वर्धनं सुख-वारिधेः॥ ५॥
जीवादितत्त्व-प्रतिपादकाय, सम्यक्त्व-मुख्याष्ट-गुणाश्रयाय।
प्रशांतरूपाय दिगम्बराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय॥ ६॥
चिदानन्दैक-रूपाय, जिनाय परमात्मने।
परमात्म-प्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः॥ ७॥
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्य भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर॥ ८॥
नहिं त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति॥ ९॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने, भक्तिर्दिने दिने।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे॥ १०॥
जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिन-धर्मानुवासितः॥ ११॥
जन्म-जन्मकृतं पापं, जन्म-कोटिमुपार्जितम्।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोगं, हन्यते जिन-दर्शनात्॥ १२॥

अद्याभवत्सफलता नयन-द्वयस्य,
देव त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन।
अद्य त्रिलोक-तिलक प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलुक-प्रमाणम्॥ १३॥

देव-स्तुति

प्रभु पतित पावन, मैं अपावन, चरन आयो सरन जी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी॥
तुम ना पिछान्यो आन मान्यो, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धिसेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकार जी॥
भव विकट वन में करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हर्‌यो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्‌यो॥
धन घड़ी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण जुत, कोटि रवि छविको हरैं॥
मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतमभयो।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो॥
मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरन जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन-तरन जी॥
जाचूँ नहीं सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथ जी।
'बुध' जाचहुँ तुव भक्ति भव-भव, दीजिये शिवनाथ जी॥

देवादिदेव अरहंत के चरणों का पूजन समस्त दुःखों का नाश करने वाला है तथा इन्द्रियों के विषयों की कामना का नाश करके मोक्ष होने रूप सुख की कामना को पूर्ण करने वाला है इसलिए अन्य की आराधना छोड़कर जिनेन्द्र की ही नित्य आराधना करो।

– पं. सदासुखदासजी : रत्नकरण्ड श्रावकाचार टीका, पृष्ठ २०५